मिशन की पत्रिकाएँ

(१) अखण्ड ज्योति (मासिक)

(धर्म एवं अध्यात्म के तत्त्वज्ञान का विज्ञान एवं तर्क-तथ्य-प्रमाण की कसौटी पर खरा चिंतन)

वार्षिक शुल्क-९६.००, आजीवन शुल्क-१८००.०० रुपया।

अखण्ड ज्योति अंग्रेजी (द्वि-मासिक)

वार्षिक शुल्क-६०.०० रुपया।

पता : अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा-२८१००३

फोन : (०५६५) २४०३९४०

(२) युग निर्माण योजना (मासिक)

(व्यक्ति, परिवार, समाज निर्माण एवं सात आंदोलनों की मार्गदर्शक पत्रिका)

वार्षिक शुल्क-४८.००, आजीवन शुल्क-९००.०० रुपया।

युग शक्ति गायत्री (गुजराती मासिक)

(गायत्री महाविज्ञान, धर्म, अध्यात्म एवं युगानुकूल विचार परिवर्तन का मार्गदर्शन)

वार्षिक शुल्क-७५.००, आजीवन शुल्क-१५००.०० रुपया।

पता : युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा-२८१००३

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

(३) प्रज्ञा अभियान (पाक्षिक)

(युग निर्माण मिशन के क्रियाकलापों एवं मार्गदर्शन का समाचार-पत्र)

वार्षिक शुल्क-२४.०० रुपया।

पाक्षिक वीडियो पत्रिका : युग प्रवाह

(युग निर्माण मिशन के प्रमुख क्रियाकलापों की दृश्य-श्रव्य जानकारी)

वार्षिक शुल्क-१५००.०० रुपया।

पता : शांतिकुञ्ज, हरिद्वार (उत्तरांचल) फोन : ०१३३४-२६०६०२

GT 14

प्रकाशक :
युग निर्माण योजना
गायत्री तपोभूमि, मथुरा-३

लेखक :
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

मूल्य : ४.०० रुपये

सन् : २००७

मुद्रक :
युग निर्माण योजना प्रेस
गायत्री तपोभूमि, मथुरा-३
फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

नौ दिवसीय साधना सत्रों का दर्शन दिग्दर्शन एवं मार्गदर्शन

मनुष्य शरीर परमात्मा का सर्वोपरि अनुग्रह माना गया है, पर यह उस खजाने की तरह है, जो गड़ा तो अपने घर में हो, पर जानकारी रत्ती भर भी न हो। यदि किसी के मन में अध्यात्म साधनाओं के प्रति श्रद्धा और जिज्ञासा का अंकुर फूट पड़े, तो उस परमात्मा के छिपे खजाने की जानकारी दे देने जैसा प्रत्यक्ष वरदान समझना चाहिए। ऐसे अवसर जीवन में बड़े सौभाग्य से आते हैं। इस पुस्तिका को आप अपने लिए परम पूज्य गुरुदेव का "परा संदेश" समझकर पढ़ें और निष्ठापूर्वक अनुपालन करें।

व्यक्तिगत रूप से साधनायें अन्तःकरण की प्रसुप्त शक्तियों का जागरण करती हैं। उनका जागरण जिस अभ्यास से होता है, उसे साधना-विज्ञान कहते हैं। इस क्षेत्र में जितना आगे बढ़ा जाये, उतने दुर्लभ मणिमुक्तक करतलगत होते चले जाते हैं। पर इस तरह की साधनायें समय-साध्य भी होती हैं, तितीक्षा साध्य भी। परम पू. गुरुदेव ने आत्म शक्ति से उनका ऐसा सरल स्वरुप विनिर्मित कर दिया है,जो बाल-वृद्ध, नर-नारी सभी के लिए सरल और सुलभ है, लाभ की दृष्टि से भी ये अभ्यास असाधरण है।

आज समाज को प्रतिभा सम्पन्नों की आवश्यकता है। अगले दिनों लोक नेतृत्व भी वही सम्हालेंगे। यह व्यक्तित्व आयें कहाँ से ? यह एक बड़ा प्रश्न था। स्वामी विवेकानंद रामकृष्ण मिशन की स्थापना कर चुके थे। भारतीय संस्कृति की प्रामाणिकता भी उन्होंने प्रतिष्ठित कर दी थी, पर वे अपने जीवन के अन्तिम चरण में प्रायः उदास रहते थे। एक दिन उनके गुरुभाई स्वामी प्रेमानन्द ने प्रश्न किया-स्वामी जी ! आपके

मन में कहीं कोई पीड़ा है-स्वामी जी ने बताया -सब काम हो गया, पर प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तित्वों का उत्पादन नहीं हो पाया- यही मेरे दुःख का कारण है । जीवन के अन्तिम समय में परम पू. गुरुदेव का भी यही संकल्प व्यक्त हुआ । एक लाख प्रतिभा सम्पन्न आत्माओं का उत्पादन और उनका युग परिवर्तन कार्य में नियोजन-सतयुग की वापसी की अनिवार्य शर्त थी । परम पू. गुरुदेव ने उनके लिए शान्तिकुञ्ज आरण्यक की स्थापना की और उन साधनाओं का मार्गदर्शन किया, जिससे व्यक्तित्व ढलेंगे । प्रस्तुत पुस्तिका जिन हाथों में पहुँचेगी, उन्हें अपने आपको खान से प्रयत्नपूर्वक निकाले गये, काले -कुरूप हीरे-जवाहरात समझना चाहिए, जो इस नौ दिवसीय साधना -अनुष्ठान की मशीन में तराशे जाने के लिए तैयार हुए, तो एक से एक बढ़कर विवेकानन्द जैसे बनकर निकलेंगे ।

परम पू.गुरुदेव ने समय -समय पर घोषित किया है कि शान्तिकुञ्ज का विकास नवयुग की गंगोत्री के रूप में किया गया है । यहाँ से परिष्कृत प्रतिभाओं के निर्माण-निखार का कार्य व्यापक स्तर पर चलेगा । इस नव निर्माण प्रक्रिया में अध्यात्मिक साधना विज्ञान की विशेष भूमिका होगी । विश्वव्यापी समस्याओं के समाधान खोजने योग्य प्रखर विवेक एवं प्रचण्ड पुरुषार्थ, साधना प्रक्रिया द्वारा ही जागेगा । अवाञ्छनीयता के निवारण और श्रेष्ठ वातावरण के निर्माण कारक दैवी प्रवाह और साधना पुरुषार्थ का संयोग ही सफलता प्राप्त कर सकेगा । इन दिनों राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर स्थिति इतनी विस्फोटक हो गयी है कि जरा सी असावधानी से सर्वनाश जैसा दृश्य उपस्थित हो सकता है । बढ़ते हुए अहंकार तथा आयुधों के भंडार कभी भी भयानक युद्ध में मनुष्यता को झोंक सकते हैं ।वैज्ञानिक बढ़ते प्रदूषण की समस्या से चिंतित हैं ।धरती के रक्षाकवच ओजोन की परत का क्षीण होना, तापक्रम में होती वृद्धि, बिगड़ता पर्यावरण संतुलन-ये कभी भी प्रकृति के

प्रकोपों का विस्फोट कर सकते हैं । उस स्थिति में विज्ञान असहाय की तरह देखता भर रह जायेगा । समाजशास्त्री बढ़ती जनसंख्या तथा अपराधवृत्ति के कारण चिन्तित हैं । अभी भी उसकी प्रतिक्रियाएँ सम्हलती नहीं दिखतीं, और बढ़ जायेगी, तब क्या होगा ?

इन सब स्थितियों को देखकर विनाश ही निकट दिखाई देता है; किन्तु पूज्य गुरुदेव का कथन है कि स्रष्टा इस सुन्दर सृष्टि को नष्ट होने नहीं देना चाहता । मनुष्य की शक्ति के परे समस्या हो जाने के कारण वह सीधे ही हस्तक्षेप करेगा । मनुष्य को अविवेकपूर्ण रवैया अपनाने का दण्ड तो कुछ न कुछ मिलेगा ही, किन्तु कोई शक्ति मनुष्यता को उज्ज्वल भविष्य की ओर खींचकर ले जायेगी । ऐसे ही कथन दिव्य दृष्टि सम्पन्न भविष्य द्रष्टाओं के भी हैं । फ्रांस के नेस्ट्राडेमस, महात्मा सूरदास, प्रोफेसर कीरो, जीन डिक्सन आदि ने भी प्रकारान्तर से ऐसे ही संकेत दिए हैं ।

युग सन्धिकाल में दिव्य अनुदान उदारतापूर्वक बांटे जाते हैं । अध्यात्म विज्ञान दिव्य चेतना से आदान-प्रदान का ही विज्ञान है । साधानाओं द्वारा अपने पुरुषार्थ से भी ऋद्धि -सिद्धियाँ , स्वर्ग, जीवन-मुक्ति जैसे लाभ कमाये जा सकते हैं । वशिष्ठ के पास कामधेनु-नन्दिनी होने तथा दिव्य अस्त्रों को ब्रह्मदण्ड से परास्त करने के चमत्कार सर्वविदित हैं । विश्वामित्र द्वारा नयी सृष्टि निर्माण की शक्ति अर्जित करना, अगस्त्य द्वारा समुद्र सोखना,भारद्वाज द्वारा सारी अयोध्या का आतिथ्य करना-साधना की सिद्धियों के ही परिणाम थे ।

उन दिनों जैसी कठोर दीर्घकालीन साधनाएँ आज सम्भव नहीं हैं:किन्तु युगऋषि ने अपने जीवन की प्रयोगशाला में , करने में सुगम और प्रभाव की दृष्टि से असाधारण साधनाएँ विकसित की हैं । उनका स्वयं का जीवन इसका प्रमाण रहा है । फिर इन दिनों साधनापुरुषार्थ के साथ दो और भी महत्वपूर्ण पक्ष जुड़े हैं-युगसन्धि के अवसर पर अधिक उदारतापूर्वक प्राप्त होने वाले दिव्य अनुदान तथा दूसरा है नवयुग की

गंगोत्री शान्तिकुञ्ज के विशिष्ट प्राणवान वातावरण का योगदान । इनके कारण सही प्रकार किया हुआ थोड़ा सा साधना-पुरुषार्थ भी असामान्य लाभ प्रदान करता है ।

उपयुक्त साधनाओं के साथ उपयुक्त वातावरण का भी महत्व सामान्य नहीं है । प्राचीन ऋषियों से लेकर गुरुनानक, गुरुगोविन्द सिंह, ऋषि दयानन्द आदि सभी ने हिमालय के प्राणवान क्षेत्र में साधनाएँ करके ही प्रखर आत्मबल एवं शक्तियों का संचय किया था । गुरु वशिष्ठ ने श्रीराम को देवप्रयाग, भरत को ऋषिकेश, लक्ष्मण को लक्ष्मण झूला तथा शत्रुध्न को मुनि की रेती में रहकर तप करने के निर्देश दिये थे । भगवान कृष्ण ने बदरीनाथ क्षेत्र में रहकर तप साधना की थी ।

शान्तिकुञ्ज पवित्र सप्तऋषि क्षेत्र में स्थित है । इस स्थान पर विश्वामित्र जी ने नये सृजन के लिए प्रचण्ड तप किया था । पूज्य गुरुदेव एवं वन्दनीया माताजी ने उसे अपने तप से जीवन्त करके नवयुग की गंगोत्री के स्तर पर ला दिया है । ऐसे जागृत तीर्थ में की हुई साधना निश्चित रूप से अन्यत्र की गयी साधना की अपेक्षा अनेक गुनी प्रभावशाली होती है ।

"साधना से सिद्धि" का सूत्र सर्वविदित है । मनुष्य के अंतराल में दिव्य शक्तियों के भण्डार छिपे हुए हैं । मूलाधार से सहस्रार तक फैले इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना तथा चक्रों के तंत्र को जागृत -झंकृत करने में साधना विज्ञान ही सक्षम है । मस्तिष्क जादू की पिटारी है । उसका केवल ७ से १४ प्रतिशत भाग सक्रिय रहता है । उसके प्रसुप्त अंश को जगृत करके, उसके माध्यम से ब्रह्माण्डीय शक्तियों से आदान-प्रदान संभव है । साधनाएँ दिव्यता धारण करने की पात्रता बढ़ाती हैं । युगसंधि के संदर्भ में मुक्तहस्त से बाटी जाने वाली दिव्य क्षमताओं को ग्रहण,धारण एवं प्रयुक्त करने की क्षमता का विकास साधनाओं के सहारे ही किया जा सकता है । इस प्रकार अनायास ही असाधारण श्रेय-सौभाग्य के द्वार

खुलने संभव हैं ।

शान्तिकुंज के साधना सत्रों की उपयोगिता उक्त दृष्टियों से असामान्य है । यह पंक्तिया साधकों तक पहुँचाने का उद्देश्य यही है कि वे उपयुक्त मनोभूमि और अभ्यास लेकर पहुँच सकें । इससे साधना में प्रतिष्ठित होकर उनका भरपूर लाभ उठाना संभव हो सकेगा । युग ऋषि ने दुरूह साधनाओं को सुगम तथा प्रभावशाली बना दिया है, किन्तु उन्हें सही ढंग से,निर्धारित अनुशासनों सहित तो करना ही होगा । थोड़ी सी मनोयोग युक्त तत्परता बरतने से ही साधक दिव्य अनुदानों की उस दुर्लभ धारा से जुड़ सकते हैं, जो कभी-कभी ऐसे विशिष्ट अवसरों पर ही खुलती है ।

शान्तिकुंज बर्तन पकाने के आँवे की तरह है, जहाँ श्रेष्ठ और प्रखर प्रतिभा-संपन्न व्यक्तित्त्व ढाले जाते हैं । आँवे से बाहर छिटक जाने वाले बर्तन कच्चे रह जाते हैं । माँ के पेट में बैठे बालक को प्रकृति जीवन के सभी आवश्यक तत्त्व और उपादान बिना माँगे प्रदान करती है । शांतिकुञ्ज साधना अनुष्ठान के ९ दिन, ९ माह की गर्भावस्था है । उस स्थिति को पार कर लेने पर जीवन का आनंद और संसार भर का प्यार और सहयोग मिलने के समान अभूतपूर्व लाभ करतलगत होते हैं । आशा की जानी चाहिए आप इस अनुष्ठान से लौटने पर अपने भीतर एक प्रखर प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तित्त्व का जन्म हुआ अनुभव करेंगे । उसके बदले सारे संसार का सम्मान आपको मिले, तो इसे नितान्त सहज और स्वाभाविक मानें । आत्मिक लाभों का अनुभव तो गूंगे के गुड़ की तरह अनिर्वचनीय अनुभव करेंगे ही ।

निर्धारित साधनाओं के स्वरूप और क्रम

साधना शब्द अपने आप में अपना स्वरूप स्पष्ट करता है । बहुत कुछ पाने की और उसका उपयोग करके लाभान्वित होने की इच्छा

सभी की होती है किन्तु यदि प्राप्त को साधना-सम्हालना नहीं आया, तो उपयोग और लाभ कमाना संभव नहीं होगा- यह सर्वविदित है । ऋषियों ने अनुभव किया कि ईश्वरीय सत्ता अनुदानों की वर्षा करती ही रहती है । यदि हम उन्हें साधना सीख लें, तो हर सुख सौभाग्य को अपने जीवन में जगा सकते हैं । इसीलिए उन्होंने साधना की अनिवार्यता पर बहुत जोर दिया है ।

हर साधना का उद्देश्य एक ही है - भावनाओं, कामनाओं, विचारणाओं और चेष्टाओं को ईश्वरीय अनुशासन के अनुरूप ढाल लेना । व्यक्तित्त्व के विभिन्न पक्षों-पहलुओं को साधने के लिए विभिन्न प्रकार की साधनाएँ विनिर्मित की गयी हैं । उपयुक्त साधना उपयुक्त मनोभूमि एवं उपयुक्त वातावरण में सम्पन्न होने पर चमत्कारिक परिणाम उत्पन्न करती है ।

परम पूज्य गुरुदेव का कथन है " उपासना सीमित समय में की जा सकती है, किन्तु साधना तो २४ घंटे से कम में पूरी नहीं होती" । मनुष्य की हर चेष्टा अथवा क्रिया के साथ कोई न कोई प्रवृत्ति जुड़ी होती है । हर प्रवृत्ति साधनामय बने, उसके लिए दिन चर्या से जुड़ी हर प्रक्रिया साधना रूप में ही चलानी होगी । इस दृष्टि से युग तीर्थ शान्तिकुंज में ऐसी व्यवस्था बनायी गयी है कि हर साधक २४ घंटे साधनामय मनोभूमि में रह सके ।

गंगा की गोद, हिमालय की छाया, सप्तऋषियों की तप: स्थली, अखण्डदीप, नित्ययज्ञ, प्रखर मार्गदर्शन, दिव्य संरक्षण, सजल श्रद्धा एवं प्रखर प्रज्ञा से ओत-प्रोत प्राणवान तीर्थ चेतना, भक्तियोग, ज्ञानयोग, कर्मयोग के त्रिवेणी संगम जैसी अनेक विशेषताएँ साधक को थोड़े प्रयास में ही दिव्य अनुभूतियों की गोद में बिठा देने में सक्षम हैं । साधनाओं का स्वरूप और क्रम समझ कर साधना सत्रों में भाग लेने वाले साधक वैसा कुछ प्राप्त करने में सफल होते हैं, जिसे अलौकिक कहा जा सके ।

आत्मबोध की साधना

प्रात: आँख खुलते ही यह साधना की जाती है । रात्रि में नींद आते ही यह दृश्य जगत समाप्त हो जाता है । मनुष्य स्वप्न-सुषुप्ति के किसी अन्य जगत में रहता है । इस जगत में पड़े हुए स्थूल शरीर से उसका सम्पर्क नाम मात्र का, काम चलाऊ भर रह जाता है । जागते ही चेतना का शरीर से सघन सम्पर्क बनता है, यह नये जन्म जैसी स्थिति होती है ।

जागते ही पालथी मार कर बैठ जायें, ठंडक हो तो वस्त्र ओढ़े रहें । दोनों हाथ गोदी में रखें,सर्वप्रथम लम्बी श्वांस लें, नील वर्ण प्रकाश का ध्यान करें, नाक से ही श्वांस छोड़े, दूसरी श्वांस में पीले प्रकाश का ध्यान करते हुए पूर्ववत् क्रिया दोहरायें, तीसरी बार फिर रक्तवर्ण प्रकाश का ध्यान करते हुये गहरी श्वांस खीचें, धीरे धीरे नाक से ही श्वांसछोड़ दें । स्वस्थ प्रसन्नचित्त हो अनुभव करें कि परमात्मा ने कृपा करके हमें आज नया जन्म दिया है । इसकी अवधि पुन: निद्रा की गोद में जाने तक की है । दाता देख रहा है कि उनका यह पुत्र इस जीवन का कैसा उपयोग करता है ?हम उसके प्रिय पुत्र हैं-नैष्ठिक साधक हैं, उसकी योजना के अनुसार ऐसा जीकर दिखायेंगे कि उसकी आँखें प्रसन्नता से चमक उठें ।

इस स्तर का सार्थक जीवन जीना तभी संभव है, जब अपने अधिकार में आये शरीर, इन्द्रियों, मन,बुद्धि, भावना, क्रिया, समय सबको परमात्मा के अनुशासन में बांधकर रखा जाय । इन्हें अनुशासनबद्ध रखने योंग्य शक्ति भी उसी नियन्ता से प्राप्त होगी, किन्तु उसके लिए मात्र कल्पना स्तर का चिन्तन पर्याप्त नहीं, उसे संकल्प,उमंग,उत्कंठा स्तर का बनाना होता है ।

आज के नये जन्म के लिए भगवान का आभार मानते हुए साधक के अनुरूप दिनभर के क्रिया-कलापों का खाका मस्तिष्क में

बनाना चाहिए। प्रार्थना करनी चाहिए हे-प्रभु ! आपने हमें जो दुर्लभ शरीर-विभूतियाँ एवं अवसर सहित यह जीवन दिया है, उसे हम सार्थक बनाने का संकल्प लेते हैं। हे दाता ! आपने जिस उदारता में यह सब दिया है, हम उसे उसी स्तर की तत्परता के साथ उपयोग में लायेंगे। हम अपनी सामर्थ्य भर कोई कोर -कसर नहीं रहने देंगे। आप हमें शक्ति देना।

जागरण के साथ आश्रम में होने वाली प्रार्थना-वह शक्ति हमें दो दयानिधे, कर्तव्य मार्ग पर डट जावें -इसी आत्मबोध साधना से जुड़ी उल्लास भरी अभिव्यक्ति की प्रतीक है।

तीर्थ चेतना में अवगाहन

शान्तिकुंज एक जाग्रत् तीर्थ है। यह वह स्थान है, जहाँ महर्षिविश्वामित्र ने नयी सृष्टि के लिए तप-साधना की थी। परम पू० गुरुदेव एवं वन्दनीया माता जी ने इसे अपने प्रचण्ड तप के प्रभाव से युग तीर्थ -नवयुग की गंगोत्री स्तर का विकसित किया है। भूमि का पुरातन संस्कार,ऋषि युग्म के तप का उभार तथा युग शक्ति-महाकाल की युग प्रवर्तक चेतना का संचार, यह तीन धारायें मिलकर इसे आध्यात्मिक त्रिवेणी संगम-तीर्थ राज स्तर का बनाती हैं। इसमें भावनापूर्वक अवगाहन करने से "काक होहिं पिक बकहु मराला", की उक्ति के अनुरूप काया-कल्प जैसे लाभ प्राप्त हो सकते हैं।

आँख खोलने से सुन्दर दृश्य दिखाई देते हैं। कान खोलने से स्वरों की मधुरता का बोध होता है। इसी प्रकार श्रद्धा-भावना के उभार से दिव्य प्रवाहों का बोध होता-लाभ प्राप्त होता है। युग-तीर्थ में संचरित सघन दिव्य प्रवाहों से स्वयं को जोड़े रखने से दिनचर्या का हर कार्य, शरीर की हर क्रिया-चेष्टा योग साधना जैसे फल प्रस्तुत करती है।

आत्मबोध साधना के पश्चात् दैनिक कर्म करते हुए भावना

करें कि हम कालगति के प्रभाव से उत्पन्न मल-विकारों को शरीर, मन-अन्तःकरण से हटाकर स्वयं को स्वच्छ-पवित्र बना रहे हैं। माँ जब बालक को मल आदि धोकर, स्वच्छ वस्त्र पहनाकर तैयार करती है, तो हर कोई उसे गोद में लेकर प्यार करना चाहता है। दैनिक कर्म करते हुए अनुभव करें कि तीर्थ चेतना मातृ सत्ता की तरह हमें विभिन्न क्रिया-कृत्यों के माध्यम से स्वच्छ बनाकर प्रभु की गोद में बैठने-उपासना कर सकने योग्य बना रही है।

उपासना-साधना के क्रम में तो तीर्थ में संव्याप्त दिव्यता से सम्पर्क जोड़ना ही है, अन्य क्रिया-कलापों में भी उसी भाव को बनाये रखना है। भोजन के समय प्रसाद-संस्कारित अन्न के माध्यम से इन्द्रियों और मन का नवीनीकरण करने का भाव रखें। प्रवचन कक्षाओं में वाणी, द्वारा गुरुदेव के निर्देश मंत्र प्राप्त करने का लाभ पायें। हर निर्धारित कार्य पर नियमित समय पर पहुँचते हुए ऋषि चेतना की दृष्टि में स्वयं को प्रामाणिक -स्फुर्तिवान साधक-स्वयंसेवक बनाने का ध्यान रखें। श्रमदान, स्वच्छता के कार्यों को अपने श्रम-मनोयोग द्वारा तीर्थ की प्रखरता-प्रभावशीलता बढ़ाने में अपना नैष्ठिक योगदान मानें। इस प्रकार हर क्रिया को साधना स्तर का बनाये रखने का प्रयास करें।

जप और ध्यान

नौ दिवसीय साधना सत्रों में साधकों से गायत्री महामंत्र के २४००० जप सहित साधना -अनुष्ठान कराया जाता है। गायत्री महामंत्र का प्रभाव, उच्चारण तथा भाव -चिन्तन दोनो ही प्रकार से होता है। अन्तर्राष्ट्रीय संस्था थियोसोफिकल सोसायटी (ब्रह्मविद्या समाज) के दिव्य दृष्टि सम्पन्न साधक -पादरी लैडविटर ने गायत्री महामंत्र के प्रभाव की समीक्षा अपनी दृष्टि के आधार पर की थी। उनका कथन है कि यह अत्यधिक शक्तिशाली मंत्र है। प्रकृति की दिव्य सत्ताएँ इसके

भाव-कम्पनों से तत्काल प्रभावित होती हैं। किसी भी भाषा में इसका अनुवाद करके प्रयोग किया जाय, उसकी प्रतिक्रिया समान रूप से होती है। संस्कृत में उच्चारण करने से उसके साथ एक विशेष लयबद्ध कलात्मकता भी जुड़ जाती है।

उक्त कथन ऋषियों की इस बात का ही समर्थन करता है कि गायत्री महामंत्र असाधारण है तथा उच्चारण एवं भाव-चिन्तन दोनों ही विधाओं से लाभ पहुँचाता है। इसीलिए गायत्री मंत्र के जप के साथ-साथ गहन भाव संवेदनायुक्त ध्यान करने का निर्देश पूज्यवर ने दिया है।

जप के लिए उपयुक्त वातावरण में बैठ कर षट्कर्म आदि द्वारा अपना मानस स्थिर-जागृत करके जप प्रारम्भ करना चाहिए। गायत्री का देवता सविता है अर्थात् वह चेतन धारा, जो सूर्य को सक्रिय बनाये है। भावना करें कि जिस प्रकार सूर्य का प्रकाश चर- अचर प्रकृति को चारों ओर से घेर लेता है, उसी प्रकार हमारे आवाहन पर इष्ट की चेतना का दिव्य प्रवाह हमे घेरे है। जल में मछली-वायु में पंछी की तरह, हम उसी के गर्भ में हैं। इष्ट हमें गोद में-गर्भ में लेकर स्नेह और शक्ति का संचार कर रहा है। हम जप द्वारा उस दिव्य प्रवाह को अपने शरीर-मन-अन्त:करण के कण-कण में समाहित कर रहे हैं।

इस प्रकार जप करते हुए दिव्य स्नेह, दिव्य पुलकन जैसी अनुभूति होती है। अपने में इष्ट के समाहित होने, इष्ट में स्वयं के घुलने-एकाकार होने जैसा अनुभव होता है। इस प्रकार तन्मयतापूर्वक जप करने में आनन्द और उपयोगिता दोनों है। इससे उत्पन्न परिप्रेषण क्रिया से अपने भीतर प्राणों का संचार होता है, त्वचा कोमल होती है, आँखों की चमक बढ़ती है। ध्यान जितना एकाग्र होगा, अपने भीतर सविता के प्राण की उतनी ही अधिक मात्रा उड़ेली जा सकती है। चिह्न-पूजा से लाभ भी चिह्न जैसा ही मिलता है।

दिनचर्या में जप पूरा करने के लिए पर्याप्त समय मिल जाता

है। सब्रेरे, दोपहर, शाम तीनों समय में सुविधानुसार नित्य की निर्धारित जप संख्या पूरी कर लेनी चाहिए। हर बैठक समाप्त होने पर, पास रखे पात्र का जल लेकर सूर्य को अर्घ्य अर्पित करना चाहिए। भावना करनी चाहिए कि जिस प्रकार पात्र का जल सूर्य को अर्पित होकर विशाल क्षेत्र में भाप बनकर फैल जाता है, उसी प्रकार हमारी भावनाएँ-शक्तियाँ भी समर्पित होकर सीमित से व्यापक हो रही हैं।

प्रात: प्रणाम

प्रात: ध्यान एवं आरती के बाद सभी साधक अखण्ड दीप दर्शन एवं वन्दनीया माता जी को प्रणाम करने जाते हैं। इस अवधि तक तथा इस क्रम में मौन बनाये रखना चाहिए। मौन से मानस अन्तर्मुखी होता है और तीर्थ चेतना में अवगाहन का अधिक लाभ प्राप्त होता है। बातचीत से अपना मन भी बहिर्मुखी होता है तथा अन्य साधकों के चिन्तन-प्रवाह में भी विघ्न पैदा होता है। इसलिए जागरण से यज्ञ होने तक मौन बनाये रखना उचित भी है और आवश्यक भी।

अखण्ड दीप दर्शन के साथ उस अखण्ड चेतना का बोध करना चाहिए, जो जीवन के प्रवाह को सतत बनाये रखती है। उसमें पू.गुरुदेव की आभा देखी जा सकती है। लोक कल्याण का संकल्प लिए वे अखण्ड दीप-शिखा की तरह सतत प्रकाशित हो रहे हैं। अपना स्नेह उनके साथ जोड़कर हम भी उस दिव्य ज्योति की एक किरण बनने का सौभाग्य प्राप्त कर सकते हैं।

वन्दनीया माता जी को प्रणाम करते हुए बोध करें, कि जिस मातृ सत्ता का "नमस्तस्यै-नमस्तस्यै"कहकर नमन किया गया है, वही हमारे कल्याण के लिए प्रत्यक्ष देह में स्थित है। भगवान श्री राम के कृपा पात्र बनने पर भी मातृ शक्ति का आशीष पाकर भक्तराज हनुमान के मुख से स्वभावत: निकला था- "अब कृत कृत्य भयउ मैं माता, आशीष

तव अमोघ विख्याता।" श्री राम के काज के लिए हमारे अन्दर भी ऐसी उमंग जागे कि मातृ शक्ति का अमोघ आशीर्वाद हम पर भी बरस पड़े।

परम पूज्य गुरुदेव की चरण पादुकाओं को नमन करते हुए भावना करें कि दिव्य चेतना के रूप में संव्याप्त प्राण प्रवाह में हम सराबोर हो रहे हैं। महाप्राण द्वारा इस मानव जीवन को सार्थक बनाने की शक्ति प्रदान की जा रही है।

त्रिकाल संध्या के तीन ध्यान

साधना को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए शास्त्रों-सिद्ध पुरुषों ने त्रिकाल संध्या करने का परामर्श दिया है। प्रातःकाल ब्रह्म मुहूर्त में, मध्यान्ह में और सायंकाल सूर्यास्त के संधिकाल में। सामूहिक रूप में साधना करने से उसका प्रभाव कई गुना हो जाने का तथ्य सर्वविदित है। इन्हीं सिद्धान्तों के अनुसार साधना सत्रों में तीन बार सामूहिक ध्यान प्रयोग कराये जाते हैं, जो इस प्रकार हैं।

सविता ध्यान

यह ध्यान प्रातःब्रह्म मुहूर्त में होता है। प्रातःकाल तीर्थ की प्राण चेतना से ओत-प्रोत वातावरण में यह ध्यान परम पू. गुरुदेव की वाणी में टेप निर्देशों के आधार पर चलता है। सामने स्टेज पर उगते सूर्य की आभा का दर्शन होता है। पू.गुरुदेव के प्रारंभिक निर्देश अपने शरीर मन को स्थिर करके स्वयं को दिव्य प्रवाह से घिरा हुआ अनुभव करने के होते हैं। उसके बाद उनके स्वर में स्वर मिलाकर साधक १२ बार गायत्री महामंत्र का उच्चारण करते हैं। इस समय भावना की जाती है कि युग ऋषि की वाणी के साथ उनकी प्राण चेतना भी प्रवाहित हो रही है। उनके

साथ अपने उच्चारण के मन-के कंपन एक होकर-योग की स्थिति उत्पन्न कर रहे हैं। इस क्रम में साधकों को अनुभव होने लगता है, मानो पूज्यवर का स्वर कहीं बाहर से नहीं हमारे अन्दर से ही उभर रहा है। यह अनुभूति असाधरण लाभकारी होती है। एक बार यह बोध होते ही चिन्तन के बीच अनेक बार पूज्यवर की स्वरचेतना अन्तःकरण में उभरने लगती है तथा अनेक प्रेरणाएँ मार्गदर्शन, निर्देश समयानुसार प्रदान करती रहती है।

मन्त्रोच्चार के बाद तीर्थ के दिव्य वातावरण में उगते सूर्य के स्वर्णिम प्रकाश में स्वयं को डूबा हुआ अनुभव करने के संकेत मिलते हैं। उस दिव्य प्रवाह-प्रकाश का स्थूल,सूक्ष्म एवं कारण शरीरों में संचित होने, उन्हें सुसंस्कारी तथा पुष्ट-तेजस्वी बनाने के संकेत प्राप्त होते हैं। इस समय सारी चेतना पूज्यवर के निर्देशों पर केन्द्रित रखी जाती है। जो कहा जा रहा है, उसका कोई स्थूल दृश्य कल्पना में उभरे या न उभरे, उस सत्य को अपने अन्दर घटित होने की आस्था बनाये रखनी चाहिए। यदि शरीर के किन्हीं अंगों में पुलकन, सिहरन, अन्तर्दृष्टि में प्रकाश-चिनगारियाँ, किरणों के आकार जैसे बनें, तो ध्यान का केन्द्र उन कौतुहल प्रतिक्रियाओं को नहीं बनने देना चाहिए। पूज्यवर के निर्देशों पर ही चेतना केन्द्रित रखनी चाहिए।

अन्त में "असतो मा सद्गमय" आदि प्रार्थनाएँ करके ॐ का गुंजार पूज्यवर करते हैं। इस समय ध्यान में प्राप्त अनुदानों को अपने अन्दर स्थिर करने और उनके सदुपयोग की दक्षता उभरने का भाव करना चाहिए। इसके पश्चात् पंद्रह मिनट साधक स्वयं जप करते हैं। प्राप्त अनुदानों का मंत्र जप द्वारा अपने व्यक्तित्व में हजम करने जैसा भाव इस जप के साथ किया जाता है। अपने लिए और मनुष्य मात्र के लिए उज्ज्वल भविष्य के निर्माण की प्रार्थना की जाती है। शंख ध्वनि होने पर यह सामूहिक ध्यान प्रयोग समाप्त होता है।

ज्योति अवधारणा

यह प्रयोग मध्यान्ह काल में होता है। मुख्य मंच पर दीप प्रज्वलित करके, देव नमस्कार करके, दीप यज्ञ के क्रम में २४ बार गायत्री महामंत्र स्वाहा सहित उच्चारित किया जाता है। भावना की जाती है कि युगसंधि काल में, उज्जवल भविष्य की संरचना के लिए युगशक्ति का अवतरण हुआ है। इस प्रयोग द्वारा हमें युग चेतना के साथ आत्मचेतना का योग करना है। हम ज्योति को छूकर स्वयं भी ज्योतित हो रहे हैं। युग शक्ति की महा ज्योति में अपनी भावना -विचारणा-साधना आदि को होम कर उनको अनेक गुना शक्तिशाली बना रहे हैं। इस प्रयोग के बीच साधक स्वयं को सशरीर एक ज्योति पुंज के रूप में अनुभव करने लगता है। जाने-अनजाने ही विकारों का दहन होकर संस्कारों का उन्नयन होने लगता है। अपने अन्दर अग्रदूत बनकर बढ़ने जैसी -युग नेतृत्व कर सकने जैसी क्षमता का विकास होता अनुभव होता है।

इस साधना के पश्चात् भी आधे घण्टे अपना अनुष्ठानपरक जप किया जाता है। इस प्रकार के दिव्य ध्यान प्रयोग के साथ जुड़ा हुआ यह जप, सामान्य मनोभूमि में किये गये जप की अपेक्षा अनेक गुना अधिक प्रभावकारी होता है।

नादयोग साधना

यह सामूहिक ध्यान प्रयोग सायंकालीन आरती के पश्चात् होता है। इसमें ध्यान का आधार संगीत होता है। संगीत का सीधा सम्बन्ध भाव संवेदनाओं से है। मनुष्य में अनेक प्रतिभाएँ-शक्तियाँ हैं किन्तु उन सबके मानवोचित देवोपम उपयोग की प्रेरणा भावसंवेदनाओं से ही प्राप्त होती है। उनके अभाव में प्रतिभाओं का दुरुपयोग होने लगता है और वे प्रगति के स्थान पर दुर्गति का कारण बनने लगती हैं।

सायंकालीन ध्यान में दैवी चेतना के प्रवाह को भावसंवेदनाओं के रूप में आत्मसात् करना होता है। भावना की जाती है कि स्वर वाद्य की स्वर लहरी के साथ उच्चस्तरीय भावसंवेदनाओं, स्नेह, आत्मीयता, करुणा,सहृदयता, मैत्री,उल्लास आदि का प्रवाह प्रसारित हो रहा है। तालवाद्य के साथ शरीर का कण-कण, मन, अन्तःकरण थिरक रहा है और स्वर की दिव्य संवेदनाओं के साथ एकाकार हो रहा है।

इस साधना के समय साधक को लगता है, मानो कृष्ण की मुरली दिव्य संवेदनाएँ प्रवाहित कर रही है, गोपिकाओं गौओं की तरह इन्द्रियाँ, तन्मात्राएँ, भावनाएँ उनके साथ थिरक रहीं हैं, नृत्य कर रहीं हैं और महारास जैसे दिव्य उल्लास का लाभ प्राप्त कर रहीं हैं।

मीरा ने गाया था, "पग घुँघरू बाँध मीरा नाची रे।" भाव-संवेदनाओं के घुँघरू साधक के हर चरण पर खनक उठते हैं। उनकी झंकार आस पास वालों को उल्लसित करती है, यह देख इष्ट चेतना मुस्कुरा उठती है और इन दोनों प्रतिक्रियाओं से आनन्दित साधक इष्ट चेतना के ताल पर द्रुत लय में पगसंचालन करता-नृत्य करता दिव्य उल्लास के व्यापक प्रवाह पैदा करने लगता है।

त्रिकाल संध्या की यह तीनों ध्यान-साधनाएँ पूज्य गुरुदेव की तप-साधना की दुर्लभ शोध उपलब्धियाँ हैं। इन्हें सही ढंग से समझ कर तीर्थ क्षेत्र में साधनारत होने वाले साधक,दीर्घकालीन साधानाओं के लाभ अल्पसमय में ही पा जाते हैं उनके व्यक्तित्व में देवोपम ऐसी विशेषताएँ उभरने लगती हैं, जो जीवन को श्री,समृद्धि और स्वर्ग -मुक्ति जैसे अनुदानों से युक्त बना सकती हैं।

दैनिक यज्ञ

युग तीर्थ में सभी साधक प्रातः अखण्ड दीप दर्शन के बाद अखण्ड अग्नि वाली यज्ञशाला में, यज्ञ में सम्मिलित होते हैं। शास्त्रों का

कथन "महायज्ञैश्च, यज्ञैश्च, ब्राह्मीयं क्रियते तनुम् अर्थात् यज्ञों-महायज्ञों से साधकों में ब्राह्मी चेतना का संचार होता है ।

युग तीर्थ में जीवन को यज्ञमय बनाने के प्रखर प्रवाह उमड़ते रहते हैं । यज्ञ के साथ भावना करनी चाहिए कि युग ऋषि ने तप-मंथन से ब्राह्मी चेतना को युगशक्ति यज्ञाग्नि के रूप में प्रकट किया है । हमारा समय, श्रम-साधन समिधाएँ हैं । हमारे सद्भाव सुविचार,श्रेष्ठ प्रवृत्तियाँ हव्य हैं । युग शक्ति ब्राह्मी ज्योति में हमारी समिधाएँ और भाव भरी आहुतियाँ पड़ रही हैं । हमारा जीवन यज्ञमय हुआ जा रहा है ।

आत्म देव की साधना

यह साधना अपनी सुविधानुसार दिन में एक बार भटके हुए देवता के मंदिर में की जाती है । इस कक्ष में दर्पण लगे हुए हैं । दर्पण के सामने खड़े होकर अपनी आत्मचेतना को जाग्रत्, सक्रिय करने की यह विशिष्ट साधना है ।

सामान्य रूप से मनुष्य अपने आपको परिस्थितियों में बँधा एक कर्ता-भोक्ता ही मानता है किन्तु वस्तुत: मनुष्य के अंदर चेतना की अन्य पर्तें भी हैं, जो, द्रष्टा निर्देशक और नियन्ता की क्षमताएँ भी रखते हैं । शरीर के अंदर अनेक जटिल प्रक्रियाएँ चलती रहती हैं जिन्हें वैज्ञानिक बड़ी मुश्किल से थोड़ा-बहुत समझ पाते हैं, किन्तु उन क्रियाओं का कुशल संचालन हमारी अंत:चेतना सतत करती रहती है । पाचन से प्रजनन तक की सारी क्रियाएँ अंत:चेतना द्वारा ही संचालित हैं । उनके सूक्ष्म से सूक्ष्म अद्भुत पक्ष अंत: चेतना के नियंत्रण में रहते-चलते हैं ।

संसार का कोई भी कला-कौशल, ज्ञान-विज्ञान हो; उसकी उपयोगिता तभी है, जब वह अपने व्यक्तित्व के दायरे में हो । किसी देवी देवता से इष्ट की शक्ति अपने ही अंदर प्रकट होती है । अपना ट्रांजिस्टर ठीक हो, तो संसार का कोई भी रेडियो प्रसारण पकड़ा-सुना जा सकता

है । अपनी ट्यूनिंग ठीक न हो, तो शक्तिशाली से शक्तिशाली प्रसारण (ट्राँस्मिशन) का भी लाभ नहीं उठाया जा सकता । मानवी व्यक्तित्व में अनन्त से सम्पर्क करने आदान-प्रदान करने की क्षमता है । आत्मदेव की साधना में अपने अंदर के द्रष्टा, निर्देशक, नियन्ता को जाग्रत्-विकसित, प्रतिष्ठित किया जाता है ।

इस कक्ष में पाँच आदमकद दर्पण लगे हैं । उन पर पाँच सूत्र लिखें हैं- १. सोऽहम् २. शिवोऽहम् ३. सच्चिदानन्दोऽहम् ४. आयमात्मा ब्रह्म ५. तत्त्वमसि । उन्हीं सूत्रों के आधार पर यह साधना की जाती है ।

दर्पण के सामने खड़े हों या बैठ जायें । अपने बिम्ब को ध्यान से देखें । अनुभव करें कि यह हमारा सबसे निकट का मित्र, सच्चा हितैषी तथा अनन्त क्षमताओं से सम्पन्न है । हमारे गुण दोष न तो इससे छिपे हैं और न यह उनकी ओर से उदासीन रहता है । इसके सहयोग से कोई भी दोष हटाया एवं कोई भी गुण विकसित किया जा सकता है । इस प्रकार बोध करते हुए अपने दोषों गुणों की समीक्षा करते हुए दोषों के निष्काशन तथा गुणों के संवर्धन के सार्थक ताने-बाने बुने जा सकते हैं । दर्पण पर अंकित सूत्रों को भी इस साधना का आधार बनाया जा सकता है ।

१ सोऽहम् (मै वही हूँ) मैं वही हूँ, जिसे नियन्ता ने सर्वश्रेष्ठ मानव योनि में भेज दिया । मेरे लिए उच्च मानवीय क्षमताएँ सहज-सुलभ हैं । मैं साधक हूँ, जिसे युग ऋषि ने युगतीर्थ में रहकर साधना करने का अवसर दिया । साधक का कोई क्रम मेरे लिए कठिन क्यों होगा ?

२. शिवोऽहम् (मैं शिवरूप हूँ) शिव-अर्थात् कल्याणकारी । मैं मूलत: शिव-कल्याणकारी हूँ मेरी भावनाओं, विचारणाओं, इच्छाओं, चेष्टाओं, अभ्यास आदि में अशिव का कोई स्थान कैसे हो सकता है ? यदि पदार्थ के संसर्ग से कुछ चिपक गया है, तो वह विजातीय है, उसे हटाने में क्या संकोच क्या कठिनाई ?

३. सच्चिदानन्दोऽहम् (मैं सत् चित् आनन्द रूप हूँ) मैं असत्

से प्रभावित क्यों होऊँ ? मैं जो शुभ नहीं टिकाऊ नहीं, उसे क्यों चाहूँ ? मैं आनन्द हूँ, पदार्थों में खोजता हुआ क्यों भटकूं । मैं श्रेष्ठतम में ही रस क्यो न पैदा कर लूं ? आदि ।

४. अयमात्मा ब्रह्म- (यह आत्मा ही ब्रह्म है) सागर भी जल है-बूंद भी तो जल ही है । हर किरण में सूर्य का गुण है । आत्मा चाहे जितना छोटा अंश हो, उसमें ब्रह्म से जुड़ने की क्षमता है और उससे जुड़ने के बाद छोटा-बड़ा क्या ? नल की टोंटी और विशाल टंकी-दोनों में पानी देने की समान क्षमता है, तो दीन क्यों बनूँ समर्थ बनकर क्यों न रहूँ ?

५. तत्त्वमसि (वह तुम्हीं हो) जीवन में -संसार में जो कुछ भी श्रेष्ठ है, वह सब तुम (परमात्मा) ही तो हो । हर दृश्य प्रकाश ही तो है । फिर श्रेष्ठता खोजता क्यों भटकूँ, पदार्थ की गुलामी क्यों करूँ, सारी श्रेष्ठता तुममें-हर श्रेष्ठता में तुम्हें ही क्यो न देखूँ ?

उक्त सूत्रों के आधार पर अपनी समीक्षा करते हुए अपने बिम्ब द्रष्टा- नियंता को अभीष्ट लक्ष्य तक ले चलने के लिए प्रेरित करना चाहिए । इस साधना से अपने ही अंदर गुरुतत्व जागृत होने लगता है-हर समस्या का समाधान और उसे चरितार्थ करने की शक्ति का स्रोत अंदर ही प्रकट होने लगता है ।

आसन, मुद्रा, बन्ध

हर साधक को आसनों का सुगम किन्तु अति प्रभावकारी योग प्रज्ञा अभियान का योग व्यायाम भी सिखाया जाता है । उसके साथ शिथिलीकरण मुद्रा,शक्तिचालिनी मुद्रा, खेचरी मुद्रा आदि साधक की आवश्यकता एवं मन:स्थिति के अनुसार सिखा दी जाती हैं । इसी प्रकार शक्ति प्रवाहों को गलत दिशा में प्रवाहित होने से रोक कर उन्हें ऊर्ध्वगामी बनाने के लिए आवश्यकतानुसार मूलबन्ध, उड्डियान बन्ध एवं जालंधर बन्ध का भी अभ्यास कराया जाता है ।

विशिष्ट प्राणायाम

ऋषियों की अद्‌भुत देन में से प्राणायाम एक है । वैज्ञानिक कहते हैं यह सृष्टि तीन आयामी (थ्रीडायमेंशनल) है । वे हैं लंबाई,चौड़ाई तथा ऊँचाई या गहराई इन्हीं से किसी वस्तु का आकार-विस्तार जाना जाता है । किन्तु ऋषि कहते हैं- प्राणियों के साथ एक और चौथा आयाम जुड़ा रहता है, जिसे **"प्राण"** कहते हैं । प्राण का आयाम विकास हो, तो सामान्य आकार का व्यक्ति भी असाधारण कार्य करता है । संतों-महापुरुषों में प्राण की अधिकता ही उन्हें महान बनाती है । विश्व ब्रह्माण्ड में प्राण का अनन्त सरोवर लहरा रहा है । सामान्य रूप से श्वांस-प्रश्वांस के साथ प्राण का उतना आवागमन बना रहता है, जिसके सहारे जीवन टिका रह सके । पर जीवट प्राप्त करने के लिए संकल्पपूर्वक श्वांस-प्रश्वांस के साथ प्राणायाम प्रक्रिया अपनानी होती है ।जीवन साधना सत्रों में तीन विशिष्ट प्राणायामों का प्रशिक्षण दिया-अभ्यास कराया जाता है । वे हैं १.प्राणाकर्षण २.अनुलोम-विलोम-सूर्यवेधन तथा ३.नाड़ी शोधन । इनकी विधि इस प्रकार है:-

प्राणाकर्षण प्राणायाम

सुखासन में, मेरुदण्ड सीधा रखते हुए सहज स्थिति में बैठें । दोनों हाथ गोद में या घुटनों पर रखें । आँखें बन्द करें । ध्यान करें कि विश्व में प्राण का अनन्त सागर हिलोरें ले रहा है । तीर्थ क्षेत्र में उसकी सघनता विशेष है । वह हमारे आह्वान पर हमारे चारों ओर घनीभूत हो रहा है ।

धीरे-धीरे गहरी श्वांस खींचें । भावना करें कि दिव्य प्राणप्रवाह

श्वांस के साथ अन्दर प्रवेश कर रहा है तथा सारे शरीर में कोने-कोने तक पहुँच रहा है।

श्वांस रोकते हुए ध्यान करें कि दिव्य प्राण शरीर के कण-कण में सोखा जा रहा है, और मलिन प्राण छोड़ा जा रह है। श्वांस निकालते हुए भावना करें कि वायु के साथ मलीनताएँ बाहर निकल कर दूर चली जा रही हैं।

श्वांस बाहर रोकते हुए ध्यान करें कि खींचा हुआ प्राण अन्दर स्थिर हो रहा है। बाहर श्रेष्ठ प्राण पुन: हिलोरें ले रहा है। श्वांस खींचने और निकालने में एक सा समय लागायें। अन्दर रोकने और बाहर रोकने में खींचने या छोड़ने से आधा समय लगायें। इस प्राणयाम से थोड़े प्रयास से ही दिव्य प्राण के बड़े अनुदान साधक को प्राप्त हो जाते हैं।

अनुलोम-विलोम-सूर्यवेधन

मेरुदण्ड सीधा करके बैठें। दिव्य प्राण का ध्यान करें। बायीं नासिका से श्वांस खींचे -भावना करे, इड़ा नाड़ी में होकर प्राण मेरुदण्ड मार्ग से मूलाधार चक्र तक पहुँचता है। वहां मन्थन करता है। श्वांस दाहिनी नासिका से निकालें, भावना करें कि पिंगला नाड़ी में घर्षण करता हुआ प्राण बाहर निकल गया। पुन: दायीं नासिका से श्वांस खींचे। इसी प्रकार भावना करते हुए वांयी नासिका से निकाल दें। बायें से खींचना दायें से निकाल दायें से खींचना बायें से निकालना इस प्रक्रिया को अनुलोम- विलोम कहते हैं। इससे प्राण की मथनी से अन्दर मन्थन किया जाता है। इस प्रकार तीन बार करके, फिर दोनों नासिकाओं से प्राण खीचें तथा भावना करें, कि घर्षण से उत्पन्न ऊर्जा और यह दिव्य प्राण नाभि-चक्र-सूर्यचक्र को तेजस्वी बना रहा है। दोनों नासिका छिद्रों से श्वांस छोड़ें। बाहर रोकते हुए भावना करें कि सूर्य चक्र अधिक तेजस्वी होते हुए सारे तंत्र को प्रकाशित कर रहा है। यह सूर्यवेधन प्रक्रिया है।

तीन बार अनुलोम- विलोम तथा एक बार सूर्यवेधन यह मिलकर एक समग्र प्राणायाम होता है। ऐसे तीन प्राणायाम प्रारम्भ में किए जा सकते हैं। पहले की तरह पूरक तथा रेचक समान तथा कुम्भक उस के आधे समय में किया जाना चाहिए।

नाड़ी शोधन प्राणायाम

प्राणायाम मुद्रा में बैठें। प्राण का ध्यान करें। बायीं नासिका से श्वांस खींचें। इड़ा मार्ग से प्राण मूलाधार तक ले जायें, कुम्भक के बाद उसी मार्ग से बाहर निकाल दें। यही क्रिया तीन बार करें। फिर इसी प्रकार वही क्रिया तीन बार दायीं नासिका-पिंगला नाड़ी से दोहरायें। इसके बाद दोना नासिकाओं से श्वास खींचें, सुषुम्ना मार्ग से प्राण मूलाधार तक ले जायें और कुम्भक के बाद मुख से धीरे से श्वांस निकाल दें। भावना करें कि दिव्य प्राण इड़ा एवं पिंगला मार्गों को शोधित एवं जागृत कर रहा है। सुषुम्ना मार्गसे जाकर प्राण सारे तंत्रिका जाल में घूमकर, विकारों को बटोरकर मुख मार्ग के बार फेंक देता है। तीनबार बायें से, तीन बार दायें से और एक बार दोनों नासिकओं से उक्त प्रक्रिया दोहराने पर एक पूर्ण प्राणायाम बनता है। ऐसे तीन प्राणायाम प्रारम्भ में किए जाने चाहिए। पूरक, रेचक एवं कुम्भक का अनुपात पहले की ही भाँति रखना चाहिए।

प्राणाकर्षण प्रयोग तो सब के लिए अनिवार्य है, अन्य प्राणायाम पात्र भेद से बतला दिए जाते हैं। यह प्राणायाम साधक की नाड़ियों, चक्रों को शोधित एवं जागृत करने में समर्थ है।

प्राणायाम से पुष्ट नाड़ी एवं चक्र तंत्र, ध्यान-जप आदि प्रयोगों से उत्पादित ऊर्जा के धारण और नियोजन में भलीप्रकार सक्षम हो जाता है। आरोग्य, संकल्पशक्ति, पूर्वाभास, विचार संचार जैसी क्षमताएँ अनायास हस्तगत होने लगती है।

तत्त्व बोध साधना

यह साधना शयन के पूर्व की जाती है । यह प्रात: जागते ही की जाने वाली आत्मबोध साधना की पूरक सधना है । आत्मबोध सारे दिन और तत्त्वबोध से सारी रात साधक साधना रूढ़ रह सकता है ।

लगता है, रात्रि में सो जाने पर क्या होगा ? किन्तु मनुष्य के तंत्र का एक बहुत छोटा अंश ही सोते समय शान्त होता है । शेष पाचन, श्वास, हृदय, शरीर, पोषण क्रम सभी चलते रहते हैं । स्वप्न के माध्यम से व्यक्तित्व सक्रिय भी बना रहता है । इसलिए जब आँखें और कान के माध्यम से साधना में विघ्न डालने वाले स्रोत बंद हो जाते हैं, तो जीव-चेतना को दिव्य चेतना के साथ आदान-प्रदान करने के लिए अधिक अनुकूलता प्राप्त होती है ।

सारे कार्यों से निवृत्त होकर बिस्तर पर पाल्थी लगाकर बैठें । इष्ट या गुरु का ध्यान करके उनकी साक्षी में अपने दिनभर के क्रिया-कलापों की समीक्षा करनी चाहिए। भूलों के लिए क्षमा-पश्चात्ताप-प्रायश्चित्त जैसे क्रम बनाने चाहिए ।

इसके बाद विचार करना चाहिए कि निद्रा भी एक प्रकार की मृत्यु है । संसार का और अपने स्थूल शरीर का अस्तित्व बोध उस बीच समाप्त हो जाता है । संसार, घर-परिवार-इन सबकी रक्षा सोता हुआ व्यक्ति भी नहीं कर सकता। इसे मृत्यु स्थिति मानकर सब कुछ परमात्मचेतना को सौंपकर निश्चिन्त भाव से नींद-मृत्यु की गोद में जाने की मनोभूमि बनाना चाहिए । अब शान्ति से ओढ़कर लेट जायें, दोनों पैर और पंजे मिलाकर सीधे लेटें । दोनों हाथ (आधी मुट्ठी बन्द,) छाती के ऊपर रखें ध्यान मुद्रा में आँखें बन्द कर लें । इस प्रकार सब प्रभु को सौंपकर स्वयं भी उसी की गोद में समा जाने का भाव करते हुए जिधर मन कहे, उधर करवट लेकर निद्रा की गोद में जाना चाहिए ।

प्रार्थना करनी चाहिए यह शरीर, मन आदि यदि पुन: हमें दें, तो इस अबकी अपेक्षा अधिक अनुशासित, स्फूर्तिवान और सक्षम बना कर दें ताकि आपके निर्देशों का परिपालन अधिक तत्परता से किया जा सके ।

यह साधना साधक को योगनिद्रा की स्थिति में ले जाती है । साधकों के शरीर, मन, अन्त:करण में दिव्य संचार करने का सुयोग मिल जाता है ।सबेरे जागने पर साधक एक विशिष्ट स्फूर्ति, उमंग, संतोष की अनुभूति करता है ।इस प्रकार शयन के अभ्यास से सारे तनावों से मुक्ति भी मिलती है तथा अनेक सम्भावित रोगों से बचाव भी हो जाता है ।

नौ दिन की यह सत्र-साधना नवग्रहों की शान्ति, नवरत्नों की प्राप्ति, नवधा भक्ति वर्षा, नवाह्न परायण, नवरात्रि अनुष्ठान जैसा पुण्य-फलदायक है । यह सुयोग परमात्मा के विशेष अनुग्रह तथा पिछले जन्मों के पुण्य फलस्वरूप ही मिलता है, उसे सफल और सार्थक करने के लिए शान्तिकुंज में निर्धारित दैनिक कार्यक्रम साधक को उच्चस्तरीय व्यक्तित्व प्रदान करते हैं । प्रतिदिन प्रात:काल वंदनीया माता जी के प्रणाम के समय पू० गुरूदेव की कारणसत्ता सायुज्य उपस्थित रहती है । यज्ञ के उपरान्त मनुष्य जीवन की गरिमा और जीवन-साधना का पुण्य लाभ प्राप्त करने के लिए मार्गदर्शन प्रधान प्रवचन किए जाते हैं। एक दिन प्रायश्चित्य विधान के निष्कासन तप, दस स्नान, हेमाद्रि संकल्प तथा इष्टापूर्ति व्रत के लिए नियत होता है । प्रायश्चित्य की एक क्रिया सामूहिक श्रमदान की, सभी को अपराह्न करनी पड़ती है । ब्रह्मवर्चस् में शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शोध-प्रयोग का क्रम चलता है, जिसमें अपनी साधना का परीक्षण होता है । शरीर में जड़ जमाये बैठे, भव रोगों का निदान भी होता है । वंदनीया माता जी से भेंट का सभी को सुयोग मिलता है । गंगादर्शन तथा एक दिन समीपवर्ती तीर्थों के परिभ्रमण का अवकाश भी रहता है ।

उपरोक्त समस्त दैनिक क्रम का अधिक से अधिक लाभ तब

मिलता है, जब साधक उनमें डूबा हुआ, रमा हुआ रहे । ध्यान एक प्रकार की परिप्रेषण क्रिया है, जिसमें साधक अपनी ओर जितना परिप्रेषित करता है, उतना ही वापिस लौटकर मिलता है । भगवान को सर्वस्व सौंपनेवाले उनकी सारी शक्तियों के स्वामी बनते हों, पर जो मन में सन्देह पाले रहते हैं, दें या न दें,उनके प्रति परमात्मा भी मुस्कुराता रहता है । गंगा में कूदे बिना शीतलता, शान्ति, तृप्ति पाना तो दूर,शरीर का मैल भी नहीं छूटता । जन्म-जन्मान्तरों का मैल छुड़ाने के लिए नौ दिन अपनी साधना प्रधान दिनचर्या में पूरी तरह डूबे रहने वाले यहाँ से इतना लेकर लौटते हैं, जिसके लिए हजार वर्षों तक साधना करने पर भी न मिलेगा ।

एक विशेष लाभ यहाँ परम पूज्य गुरुदेव की कारण सत्ता तथा हिमालय के ध्रुव केन्द्र से इन दिनों सतत प्रवाहित होने वाली प्राण ऊर्जा का है, वह यहाँ निवास कर रहे किसी को भी अनायास ही मिलता है, उसके लिए किसी को कहने की -आग्रह करने की आवश्यकता नहीं पड़ती ।

आपके जीवन का यह सुयोग आप को धन्य बनायेगा-ऐसा हमारा सुनिश्चित विश्वास है ।

गायत्री महामंत्र और उसका अर्थ

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

भावार्थ- उस प्राणस्वरूप, दुःखनाशक, सुखस्वरूप, श्रेष्ठ, तेजस्वी, पापनाशक, देवस्वरूप परमात्मा को हम अन्तरात्मा में धारण करें । वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करे ।

गायत्री उपासना हम सब के लिए अनिवार्य

गायत्री को भारतीय संस्कृति की जननी कहा गया है । वेदों से

लेकर धर्मशास्त्रों तक का समस्त दिव्य ज्ञान गायत्री के बीजाक्षरों का ही विस्तार है । मा गायत्री का अंचल पकड़ने वाला साधक कभी निराश नहीं हुआ । इस मंत्र के चौबीस अक्षर चौबीस शक्तियों सिद्धियों के प्रतीक हैं । गायत्री उपासना करने वाले की सभी मनोकामनाएँ पूरी होती हैं, ऐसा ऋषिगणों का अभिमत है ।

गायत्री वेदमाता है एवं मानव मात्र का पाप नाश करने की शक्ति उसमें है । इससे अधिक पवित्र करने वाला और कोई मंत्र स्वर्ग और पृथ्वी पर नहीं है । भौतिक लालसाओं से पीड़ित व्यक्ति के लिए भी और आत्मकल्याण की इच्छा रखने वाले मुमुक्षु के लिए भी एकमात्र आश्रय गायत्री है । गायत्री के द्वारा आयु, प्राण, प्रजा, पशु, कीर्ति, धन एवं ब्रह्मवर्चस् के सात प्रतिफल अथर्ववेद में बताए गए हैं । जो विधिपूर्वक उपासना करने वाले हर साधक को निश्चित ही प्राप्त होते हैं ।

भारतीय संस्कृति में आस्था रखने वाले हर प्राणी को नित्य नियमित गायत्री उपासना करनी चाहिए । विधि पूर्वक की गयी उपासना साधक के चारों ओर एक रक्षाकवच का निर्माण करती है व विभिन्न विपत्तियों- आसन्न विभीषिकाओं से उसकी रक्षा करती है । प्रस्तुत समय युग संधि का है । आगामी सात वर्षों में पूरे विश्व में तेजी से परिवर्तन होगा । इस विशिष्ट समय में की गयी गायत्री उपासना के प्रतिफल भी विशिष्ट होंगे । युगऋषि, वेदमूर्ति, तपोनिष्ठ पं. श्री राम शर्मा आचार्य जी ने गायत्री के तत्वदर्शन को जन-जन तक पहुँचाया व उसे जन सुलभ बनाया है । प्रत्यक्ष कामधेनु की तरह इसका हर कोई पय पान कर सकता है । जाति, मत, लिंग भेद से परे गायत्री सर्वजनीन है सबके लिए उसकी साधना करने व लाभ उठाने का मार्ग खुला हुआ है ।

गायत्री उपासना का विधि - विधान

गायत्री उपासना तो कभी भी किसी भी स्थिति में की जा सकती

है। हर स्थिति में यह लाभदायी है परन्तु विधिपूर्वक, भावना जुड़े, न्यूनतम कर्मकाण्डों के साथ की गयी उपासना अतिफलदायी मानी गयी है। तीन माला गायत्री मंत्र का जप आवश्यक माना गया है। शौच-स्नान से निवृत्त होकर नियत स्थान, नियत समय पर, सुखासन से बैठकर नित्य गायत्री उपासना की जानी चाहिए।

उपासना का विधि-विधान इस प्रकार है-

ब्रह्म संध्या-जो शरीर व मन को पवित्र बनाने के लिए की जाती है, इसके अन्तर्गत पाँच कृत्य करने पड़ते हैं।

(अ) पवित्रीकरण-बांयें हाथ में जल लेकर, उसे दाहिने हाथ से ढक लें एवं मंत्रोच्चारण के साथ जल को सिर तथा शरीर पर छिड़क लें।

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थांगतोऽपि वा।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥
ॐ पुनातु पुण्डरीकाक्षः, पुनातु पुण्डरीकाक्षः, पुनातु।

(ब) आचमन-तीन बार वाणी, मन व अन्तःकरण की शुद्धि के लिए चम्मच से जल का आचमन करें। हर मंत्र के साथ एक आचमन जल पिया जाय।

ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥१॥
ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा ॥२॥
ॐ सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ॥३॥

(स) शिखा स्पर्श एवं वंदन-शिखा के स्थान को स्पर्श करते हुये भावना करें कि गायत्री के इस प्रतीक के माध्यम से सदा सद्विचार ही यहाँ स्थापित रहेंगे। निम्न मंत्र का उच्चारण करें-

चिद्रूपिणि महामाये दिव्यतेजः समन्विते।
तिष्ठ देवि शिखामध्ये तेजोवृद्धिं कुरुष्व मे ॥

(द) प्राणायाम-श्वास को धीमी गति से गहरी खींचकर रोकना व बाहर निकालना प्राणायाम के कृत्य में आता है। सांस खींचने के साथ भावना करें कि प्राणशक्ति और श्रेष्ठता सांस के द्वारा अंदर खींची जा रही है, छोड़ते समय यह भावना करें कि हमारे दुर्गुण-दुष्प्रवृत्तियाँ-बुरे विचार प्रश्वास के साथ बाहर निकल रहे हैं। प्राणायाम निम्न मंत्र के उच्चारण के बाद किया जाय- **ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम्। ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्। ॐ आपोज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वः ॐ ॥**

न्यास-इसका प्रयोजन है-शरीर के सभी महत्वपूर्ण अंगों में पवित्रता का समावेश तथा अंतः की चेतना को जगाना; ताकि देवपूजन जैसा श्रेष्ठ कृत्य किया जा सके। बायें हाथ की हथेली में जल लेकर दाहिने हाथ की पाँचों उंगलियों को उसमें भिगोकर बताए गए स्थान का मंत्रोच्चार के साथ स्पर्श करें।

ॐ वाङ् मे आस्येऽस्तु। (मुख को)
ॐ नसोर्मे प्राणोऽस्तु। (नासिका के दोनों छिद्रों को)
ॐ अक्ष्णोर्मेचक्षुरस्तु। (दोनों नेत्रों को)
ॐ कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु। (दोनों कानों को)
ॐ बाह्वोर्मे बलमस्तु। (दोनों बाहों को)
ॐ ऊर्वोर्मेओजोऽस्तु। (दोनों जंघाओं को)
ॐ अरिष्टानि मेंगानि तनूस्तन्वा में सह सन्तु। (पूरे शरीर को,

आत्मशोधन की ब्रह्म संध्या के उपर्युक्त पाँचों कृत्यों का भाव यह है कि साधक में पवित्रता एवं प्रखरता की अभिवृद्धि हो तथा मलिनता-अवांछनीयता की निवृत्ति हो। पवित्र-प्रखर व्यक्ति ही भगवान के दरबार में प्रवेश के अधिकारी होते हैं।

देवपूजन-गायत्री उपासना का आधार केन्द्र महाप्रज्ञा-ऋतंभरा

गायत्री हैं। उनका प्रतीक चित्र सुसज्जित पूजा की वेदी पर स्थापित कर उनका निम्न मंत्र के माध्यम से आवाहन करें। भावना करें कि साधक की भावना के अनुरूप माँ गायत्री की शक्ति वहाँ अवतरित हो, स्थापित हो रही है।

ॐ आयातु वरदे देवि अक्षरे ब्रह्मवादिनि।
गायत्रिच्छन्दसां मातः ब्रह्मयोनेनमोऽस्तु ते॥

ॐ गायत्र्यै नमः। आवाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि, ध्यायामि। ततो नमस्कारं करोमि।

गुरु, परमात्मा की दिव्य चेतना का अंश है, जो साधक का मार्गदर्शन करता है। सद्गुरु के रूप में प० पू० गुरुदेव एवं वंदनीया माता जी का अभिनंदन करते हुए उपासना की सफलता हेतु गुरु-आवाहन निम्न मंत्रोच्चारण के साथ करें।

ॐ अखण्डमंडलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

ॐ श्रीगुरवे नमः। आवाहयामि, स्थापयामि, ध्यायामि।

माँ गायत्री व गुरुसत्ता के आवाहन व नमन के पश्चात् देवपूजन में घनिष्ठता स्थापन हेतु पंचोपचार पूजन किया जाता है। इन्हें विधिवत् संपन्न करें। जल, अक्षत, पुष्प, धूप-दीप तथा नैवेद्य प्रतीक के रूप में आराध्य के समक्ष प्रस्तुत किये जाते हैं। एक-एक करके छोटी तश्तरी में इन पाँचों को समर्पित करते चलें। जल से नम्रता-सहृदयता, अक्षत से समयदान-अंशदान, पुष्प से आंतरिक उल्लास, धूप-दीप से सुगंध एवं प्रकाश, पुष्प-परमार्थ तथा नैवेद्य से मधुरता-शालीनता का बोध होता है।

ये पाँचों उपचार व्यक्तित्व को सत्प्रवृत्तियों से संपन्न करने के लिए किये जाते हैं। कर्मकाण्ड के पीछे भावना महत्वपूर्ण है।

जप-गायत्री मंत्र का न्यूनतम ३ माला अर्थात् घड़ी से प्रायः १५ मि. नियमित रूप से जप किया जाय। अधिक बन पड़े, तो अधिक

उत्तम। होंठ, कण्ठ, मुख हिलाते रहें या आवाज इतनी मन्द हो कि दूसरे उच्चारण को सुन न सकें। जप प्रक्रिया कषाय-कल्मषों-कुसंस्कारों को धोने के लिए पूरी की जाती है।

"ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।" इस प्रकार मंत्र का उच्चारण करते हुए माला की जाय एवं भावना की जाय कि निरन्तर हम पवित्र हो रहे हैं, दुर्बुद्धि की जगह सद्बुद्धि की स्थापना हो रही है।

ध्यान-जप तो अंग-अवयव करते हैं, मन को ध्यान में नियोजित करना होता है। साकार ध्यान में गायत्री माता के अंचल की छाया में बैठने तथा उनका दुलार भरा प्यार अनवरत रूप से प्राप्त होने की भावना की जाती है। निराकार ध्यान में गायत्री के देवता सविता की प्रातःकालीन स्वर्णिम किरणों के शरीर पर बरसने व शरीर में श्रद्धा-प्रज्ञा-निष्ठा रूपी अनुदान उतरने की मान्यता परिपक्व की जाती है, जप और ध्यान के समन्वय से ही चित्त एकाग्र होता है और आत्मसत्ता परिष्कृत विकसित होती है।

सूर्यार्घ्यदान-विसर्जन-जप समाप्ति के पश्चात् पूजा वेदी पर रखे छोटे कलश का जल सूर्य की दिशा में अर्घ्यरूप में निम्न मंत्र के उच्चारण के साथ चढ़ाया जाता है।

ॐ सूर्यदेव सहस्रांशो तेजोराशे जगत्पते।
अनुकम्पय मां भक्त्या गृहाणार्घ्यम् दिवाकर!॥

ॐ सूर्याय नमः, आदित्याय नमः, भास्कराय नमः।

भावना यह करें कि जल आत्मसत्ता का प्रतीक है एवं सूर्य विराट् ब्रह्म का तथा हमारी सत्ता-सम्पदा समष्टि के लिए समर्पित विसर्जित हो रही है।

इतना सब करने के बाद पूजा स्थल पर विदाई के लिए करबद्ध नतमस्तक हो नमस्कार किया जाय। जप के लिए माला तुलसी या चन्दन

की होनी चाहिये। माला जपते समय तर्जनी उँगली का उपयोग न करें तथा सुमेरु का उल्लंघन न करें। सुर्योदय से दो घंटे पूर्व से सूर्यास्त के एक घंटे बाद तक कभी भी गायत्री उपासना की जा सकती है। मौन-मानसिक जप चौबीस घंटे किया जा सकता है।

परम पू० गुरुदेव पं० श्रीराम शर्मा आचार्य एवं माता भगवती देवी शर्मा की जीवन यात्रा

जन्म आश्विन कृष्ण त्रयोदशी संवत् १९६८ (२०-९-११ई०) ग्राम आँवलखेड़ा, जनपद आगरा (उ०प्र०) में एक जमींदार ब्राह्मण परिवार में। बाल्यकाल से ही अध्यात्म साधना व चर्चा में गहरी रुचि।

दस वर्ष की आयु में बनारस में पं० महामना मदन मोहन मालवीय जी द्वारा गायत्री मंत्र की दीक्षा व यज्ञोपवीत।

पंद्रह वर्ष की आयु में गुरुसत्ता से साक्षात्कार, उनके निर्देश पर अखण्ड दीपक प्रज्वलित कर चौबीस वर्ष तक चलने वाले २४-२४ लक्ष के चौबीस गायत्री महापुरश्चरणों की शृंखला प्रारंभ। साधनाकाल में गाय को खिलाए और गोबर से छानकर निकाले गए संस्कारित जौ की रोटी व छाछ पर रहे। कुण्डलिनी तथा पंचाग्नि विद्या की साधना इस बीच पूरी हुई।

किशोरावस्था से ही स्वतंत्रता संग्राम सेनानी के रूप में सक्रिय, तीन बार जेल यात्रा। मालवीय जी, रफी अहमद किदवई, श्रीमती स्वरूपारानी नेहरु (जवाहरलालजी की माता) देवीदास गाँधी के साथ आसनसोल जेल में। सविनय अवज्ञा आंदोलन में सरकार के उत्पीड़न के बावजूद, घर की कुर्की होने के बाद भी आजादी की लगन। राजनीतिक गुरु-महात्मा गाँधी। मार्गदर्शन लेने साबरमती आश्रम की कई बार यात्रा।

"अखण्ड-ज्योति" पत्रिका का पहले फ्रीगंज आगरा, फिर १९४० की वसंत पंचमी से **"अखण्ड-ज्योति संस्थान"** मथुरा से प्रकाशन। अध्यात्म तत्वदर्शन का शास्त्रोक्त एवं विज्ञान-सम्मत प्रतिपादन, अखण्ड-ज्योति पत्रिका ५४ वर्ष पूरे कर रही है।

वंदनीया माता जी भगवती देवी का १९४३ में उनके जीवन में प्रवेश। गुरुदेव की उग्र तपश्चर्या में उनका पूर्ण योगदान। नारी जागरण कार्यक्रम का वंदनीया माताजी द्वारा सफल संचालन। गुरुदेव के साथ दो शरीर एक प्राण के रूप में सक्रिय।

चार बार अपने गुरु श्री सर्वेश्वरानन्दजी के निर्देश पर हिमालय की यात्रा। प्रत्येक बार ६ माह से लेकर १ वर्ष तक अज्ञातवास में कठोर तप-साधना। उक्त अवधि में माताजी द्वारा कार्य संचालन।

चौबीस महापुरश्चरणों की समाप्ति पर १९५३ में महर्षि दुर्वासा की तपस्थली में मथुरा-वृन्दावन मार्ग पर गायत्री तपोभूमि की स्थापना। अखण्ड-अग्नि प्रज्वलित। १०८ कुण्डीय गायत्री महायज्ञ के साथ गुरु दीक्षा देने का क्रम आरंभ।

१९५८ में एक विशाल सहस्रकुण्डीय गायत्री यज्ञ मथुरा में संपन्न, जिसमें चार लाख से अधिक गायत्री साधकों ने भाग लिया। गायत्री परिवार का संगठन इसके बाद बना।

गायत्री महाविद्या पर बृहद् विश्वकोष स्तर का तीन खण्डों में गायत्री महाविज्ञान प्रकाशित।

अपने तीसरे अज्ञातवास से लौटकर १९६० में चारों वेदों का सरल सुबोध भाष्य, १०८ उपनिषदों का भाष्य, २० स्मृतियों का हिन्दी रूपान्तर, १८ पुराणों का पुनरुद्धार, संस्करण तथा षट्दर्शन का भाष्य प्रकाशित किया।

युग निर्माण योजना का उद्घोष १९६३ में शतसूत्री योजना

की घोषणा एवं राष्ट्रव्यापी समाज निर्माण के कार्यक्रम का सफल क्रियान्वयन। सारे देश में गायत्री यज्ञों की श्रृंखला का संचालन। देव-दक्षिणा में लाखों व्यक्तियों के दुर्व्यसन छुड़ाकर, उन्हें दिव्य-जीवन की ओर मोड़ा।

धर्म-अध्यात्म, गायत्री महाविद्या, जीवन जीने की कला, समग्र आरोग्य, व्यक्ति-परिवार-समाज निर्माण तथा वैज्ञानिक अध्यात्मवाद पर तीन हजार से अधिक छोटी-बड़ी पुस्तकों का लेखन व प्रकाशन।

युग निर्माण योजना एवं युगशक्ति गायत्री पत्रिका (दस विभिन्न भाषाओं में) का लेखन, सम्पादन एवं प्रकाशन।

६० वर्ष की आयु में २० जून १९७१ को मथुरा छोड़कर एक वर्ष हिमालय में उग्र तपश्चर्या हेतु प्रस्थान। धर्मपत्नी वन्दनीया माता भगवती देवी शर्मा द्वारा शान्तिकुञ्ज हरिद्वार में आरंभ किये गये शक्ति केन्द्र का संचालन।

१९७२ की गायत्री जयन्ती के बाद से शांतिकुञ्ज, में दुर्गम हिमालय में कार्यरत ऋषियों की परम्परा का बीजारोपण कर उसे एक सिद्ध पीठ के रूप में विकसित किया।

पता-

गायत्री तीर्थ शान्तिकुञ्ज, हरिद्वार

(उत्तराञ्चल) २४९४११

फोन : ०१३३४-२६०६०२

E-mail : Shail@del2.vsnl.net.in

Website: www.gayatripariwar.org

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा